अरुणाचल की हिंदी

हरीश कुमार शर्मा
संपर्क - 9436053279

राजभाषा की दृष्टि से 'ग' क्षेत्र में परिगणित किए जाने वाले समस्त हिंदीतर-भाषी राज्यों में अरुणाचल प्रदेश वह राज्य है, जहां हिंदी सर्वाधिक बेहतर स्थिति में है। समस्त हिंदीतर-भाषी राज्यों में यह ऐसा अकेला राज्य है जिसने हिंदी को पूरे अपनेपन के साथ स्वीकार किया है। शताधिक जनभाषाओं वाले इस राज्य में हिंदी आज मात्र संपर्क-भाषा की ही भूमिका में ही नहीं है, अपितु शिक्षा, शोध एवं लेखन की ओर भी मजबूत कदम उठा रही है। प्रदेश के प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में यहां तक कि सुदूरस्थ अंचलों तक में ऐसे लोग अवश्य मिल जाएंगे, जो बाहरी व्यक्ति से हिंदी में संवाद कर लेंगे। पर हां, यह अलग बात है कि उस हिंदी का अंदाज अलग होगा- विशेष तौर पर पुराने लोगों का। नई पीढ़ी का, और वह भी यदि कोई पढ़ा-लिखा व्यक्ति होगा तो उसके साथ यह समस्या भी नहीं होगी। वह जमाना पीछे छूटा जबकि यहां के लोग स्वयं ही अपनी हिंदी पर हँसते थे। इस संबंध में एक किस्सा यहां बड़ा प्रचलित है। यहां के एक अधिकारी किसी समारोह में सम्मिलित होने के लिए किसी हिंदी-भाषी राज्य में गए। वहां अपनी बारी आने पर उन्होंने पूरे मन से हिंदी में अपना भाषण दिया। जब वापस आकर बैठे तो बगल वाले सज्जन ने बधाई और अचरज मिश्रित भाव से कहा कि 'अरे! आपकी भाषा तो हमारी भाषा से बहुत मिलती है!'

आज अरुणाचल में बहुत से पढ़े-लिखे लोग जब हिंदी बोलते हैं तो वह इतनी परिष्कृत होती है कि सिर्फ़ बोलने के आधार पर उनमें और हिंदी भाषी व्यक्ति में अंतर करना मुश्किल हो जाए। तथापि यहां जनसामान्य की हिंदी का अपना एक अलग अंदाज है; जिसके कारण आप उसे बंबइया हिंदी, मद्रासी हिंदी, कलकतिया हिंदी आदि की तरह अरुणाचली हिंदी कह सकते हैं। यह अंदाज यहां की खूबसूरती है, भारत के वैविध्यपरक स्वरूप की खूबसूरती है और हिंदी भाषा की क्षमताओं एवं विशिष्टताओं की खूबसूरती है। हिंदी में यह बहुत जबरदस्त गुण है कि आप उसमें कितने ही शब्द अन्य भाषाओं के डाल दीजिए, उसके व्याकरण में कितनी ही छूट ले लीजिए, कितनी ही गलतियां कर लीजिए; फिर भी वह हिंदी रह सकती है। और, हिंदी रह ही नहीं सकती है, एक दूसरे की बात को समझ-समझा भी सकती है। भाषा का सबसे बड़ा काम एक की बात को दूसरे तक पहुंचाना होता है और जहां वह यह कर पाने में कामयाब है, वहीं वह स्वयं भी कामयाब है। अरुणाचली हिंदी की भी यह बड़ी विशेषता है। उसका स्वरूप चाहे जैसा भी हो, पर वह यहां विभिन्न भाषा-भाषियों में भावों, विचारों के आदान-प्रदान में अपनी सफल भूमिका निभा रही है।

कोई भी भाषा जब विस्तार लेगी तो उसका स्वरूप भी विस्तृत और बहुआयामी होगा। अरुणाचली हिंदी, हिंदी की इस बहुआयामिता का विस्तार है। लेकिन, इसका मतलब यह नहीं है कि जो जैसा है उसे वैसा ही रहने देना चाहिए और उसमें सुधार के कोई प्रयत्न ही नहीं होने चाहिए। जब कोई भाषा मानक भाषा से बहुत दूर चली जाती है तब एक नई भाषा ही जन्म ले लेती है। संस्कृत से उद्भूत भारत की अनेक भाषाओं के साथ ऐसा ही हुआ है, पर अरुणाचल के लोग इस ओर एकदम सजग हैं। सजग ही नहीं, अपनी हिंदी में उत्तरोत्तर सुधार के लिए सचेष्ट भी हैं। हम लोग यहां विश्वविद्यालय में हैं- सर्वाधिक पढ़े लिखे लोगों के बीच। जिनसे हमारा सतत संबंध रहता है, उनमें अधिकांश हिंदी से जुड़े विद्यार्थी, शोधार्थी, अध्यापक हैं। इसलिए यहां बोली जाने वाली हिंदी से हम अरुणाचली हिंदी का बहुत अनुमान नहीं लगा सकते, तथापि यहां के बहुत अच्छी हिंदी बोलने वाले लोग भी प्रायः बातचीत में कहते हैं कि ‘हमारी हिंदी तो ऐसी ही है’ या ‘क्या करेगा सर, हम लोग का हिंदी तो ऐसा ही है!’ यह कहते-कहते भी कि ‘हमारी हिंदी अच्छी नहीं है’ या ‘हमें अच्छी हिंदी नहीं आती’- बोलने वाला हिंदी में बहुत अच्छा भाषण दे जाता है। यह अपने में और भी अधिक सुधार की ललक का ही नतीजा है। जरूरत अपने भीतर इस तरह की हीन भावना लाने की नहीं, उन कारणों को समझने की है- जिनको दूर करने से भाषा में और भी पारंगत हुआ जा सकता है। तो आइए यहां की हिंदी के स्वरूप पर दृष्टिपात करते हुए उस पर थोड़ी चर्चा करें। लेकिन उससे पहले एक महिला वक्ता के व्याख्यान का एक अंश नमूने के तौर पर देखें और ध्यान रखें कि यह एक पढ़े-लिखे (हिंदी नहीं) सामान्य जन की भाषा है।

‘‘...इसलिए हम लोग आप लोगों से बहुत एक्सपेक्ट है। वेल एजूकेटेड आदमी होता है उसका नंबर एक तो डिसीप्लिन होगा। आशा करता है आप लोग हमारा आशा को पूरा-का-पूरा करने का कोशिश करेगा। मैंने सोशल सर्विस पर ज्यादा जोर देता था। सोशल सर्विस करके मुझे खुश थे। स्टेट गवरमेंट से बिल्कुल भी फंड के ऊपर डिपेंड नहीं करता है। नियम-नीति प्रोसीजर को करने को थोड़ा समय लग रहा है। हमें आगे बढ़ने नहीं मिल रहा है। यह का वजह से (आप सभी का आशीर्वाद से, अच्छा सोच से) हम लोग जरूर आगे बढ़ने को जारी है और हमको लगता है आगे बढ़ पाऊंगी। आप लोगों के प्लेटफार्म को मैं एडवांटेज उठाने अपना बात को रख रहा है।...’’

किसी भी भाषा के तीन महत्त्वपूर्ण पक्ष होते हैं- वर्ण, शब्द और वाक्य। वर्णों का सही ज्ञान न होने पर तथा उचित प्रयोग न कर पाने से शब्द-निर्माण में गलती होती है। उचित शब्दों के उचित स्थान पर प्रयोग न हो पाने से वाक्य ठीक से नहीं बन पाते और वाक्य ठीक से न बन पाने से अर्थ पूर्णतः नहीं खुल पाता। अर्थात्, अर्थबोध में बाधा आती है। शब्द के सही प्रयोग न होने से अनेक त्रुटियां भाषा में होती हैं। वाक्यों का पूरा दारोमदार ही शब्दों और उनके यथास्थान सटीक प्रयोग पर निर्भर होता है। शब्दों के गलत प्रयोग से वाक्य का अभिप्राय भी गलत समझ लिए जाने का ख़तरा पैदा होता है।

जहां तक वर्णों की बात है तो वर्णों के उचित संयोजन से शब्द-निर्माण होता है। सर्वविदित है कि हिंदी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। इसकी वर्णमाला में वर्णों की संख्या अधिक होने से एक सामान्य व्यक्ति को, विशेषकर हिंदीतर क्षेत्र के व्यक्ति को इसे सीखने और ठीक-ठीक प्रयोग करने में कठिनाई होती है। हिंदी जितनी बोलने-समझने में सुगम-सरल है, लिखने में उतनी ही कुछ लोगों के लिए कठिन लगती है। यही कारण है कि अरुणाचल में बोलचाल के स्तर पर तो हिंदी खूब प्रचलित है, पर लिखा-पढ़ी के स्तर पर वह बहुत ही कम प्रचलन में है। कक्षा 10 तक हिंदी अध्ययन की अनिवार्य व्यवस्था होने से हिंदी पढ़ना-लिखना तो प्रायः सभी पढ़े-लिखे लोग जानते हैं, फिर भी बाद में उसमें कुछ लिखने-पढ़ने में, विशेषकर लिखने में संकोच करते हैं। अभी नई पीढ़ी में हिंदी में उच्च शिक्षित लोगों की बहुत अच्छी संख्या यहां हो गई है और यह नित्य-निरंतर बढ़ रही है। तथापि जो शिक्षार्थी-विद्यार्थी हिंदी में उच्च शिक्षित हैं और अध्ययन तथा शोध तक से जुड़े हैं, उनसे भी छोटी-मोटी गलतियां हो जाती हैं। इस गलती के पीछे का कारण देवनागरी लिपि नहीं, उसमें लिखने-पढ़ने वालों की लापरवाही नहीं; अपितु प्रारंभिक स्तर की शिक्षा में अध्यापकों द्वारा विद्यार्थियों को ठीक से नहीं समझा पाना है। देवनागरी वैज्ञानिक और सुव्यवस्थित इसीलिए कही जाती है कि उसे एक बार ठीक से जान-समझ लिया जाए तो फिर गलती की संभावना बहुत कम रह जाती है। यदि वर्णमाला ठीक से याद हो, उसको लिखने का सही ढंग पता हो तथा उच्चारण शुद्ध हो तो लिखने में अशुद्धि की बहुत कम संभावना रह जाती है। पर यह काम होता है विद्यालय स्तर पर। खेदजनक है कि अरुणाचल में स्कूली स्तर पर ही विद्यार्थियों में यह भारी कमी रह जाती है, जो बहुत आगे जाने पर भी उनका पीछा नहीं छोड़ती। आखिर यह मूल की भूल का सवाल है। यहां हिंदी लिखने-पढ़ने में होने वाली गलतियों के दो प्रमुख कारण हैं- एक तो मात्राओं के सही प्रयोग का ज्ञान न होना और दूसरा उच्चारण-संबंधी अंतर।

अरुणाचली हिंदी की खूबसूरती इस बात में है कि यहां 'ङ' जैसे वर्ण का बहुत सुंदर इस्तेमाल किया गया है। 'क' वर्ग के इस अनुस्वार को हिंदी ने लगभग विस्मृत सा ही कर दिया था, अरुणाचल ने इसे विशिष्ट महत्त्व प्रदान कर एक तरह से पुनरुज्जीवित कर दिया। प्राथमिक कक्षाओं में जब हम लोग अंत्याक्षरी खेलते थे और अंत में यदि 'ड़' आ जाता था तो कहते थे 'ड़ से नहीं बनी चौपाई, देखो तुलसी की चतुराई।' मतलब 'ड़' से कोई शब्द या पद शुरू नहीं होता। 'ङ' की भी लगभग ऐसी ही स्थिति है। वह भी इसी तरह का वर्ण है। पर अरुणाचली हिंदी की यह विशेषता है कि यहां 'ङ' का शब्द के अंत में भी प्रयोग हो सकता है, मध्य में भी और आरंभ में भी। अंग्रेजी में इस उच्चारण को ng मिलाकर लिखा जाता है। सियाङ, ताङसा, ङमदिर आदि ऐसे ही शब्द हैं।

शब्दों की दृष्टि से देखें तो यहां की हिंदी में अंग्रेजी शब्दों का काफी चलन है। हिंदी-उर्दू के बहुत से शब्द यहां बहुप्रयुक्त होते हैं, यथा- उपाय, समय, अनुरोध, दुख, योजना, तकलीफ़, दिल, माथा आदि। अच्छा होता कि अंग्रेजी के बजाय स्थानीय शब्दों की बहुलता यहां की हिंदी में होती तो उसकी शब्द-संपदा

और भी समृद्ध हो पाती तथा स्थानीय भाषाओं से और भी निकटता स्थापित हो पाती। इस तरह दोनों भाषाओं का भला हो पाता। यद्यपि यहां की हिंदी में प्रचलित कुछ स्थानीय शब्दों का अन्दाज द्रष्टव्य है, जैसे- गिरना, बुकना, टानना, नमना, फुर्ती करना, गेजू, आस्ते, घुराना आदि-आदि।

वर्ण शब्द के लिए महत्त्वपूर्ण है, शब्द वाक्य के लिए महत्त्वपूर्ण है और वाक्य विचार के लिए। विचार को यथानुरूप पहुंचाने के लिए यथाशक्य वाक्य होना बहुत आवश्यक होता है। अशुद्ध वाक्य खटकता है और विचार-प्रवाह में तो बाधा पहुंचाता ही है, अर्थबोध में भी अड़ंगा लगाता है। वाक्य में अशुद्धियां होने के अनेक कारण हैं, पर हम अरुणाचली हिंदी के विशेष संदर्भ में जिक्र करें तो कई चीजें सामने आती हैं। लिंग, वचन, काल, क्रिया, सहायक क्रिया, कारक चिह्न आदि की सही समझ न होने के कारण इस तरह की गलतियां होती हैं।

कर्ता, कर्म और क्रिया- यह तीन वाक्य के सर्वप्रमुख अवयव हैं। कर्ता में संज्ञा और सर्वनाम दोनों समाहित होते हैं। संज्ञा में तो खैर क्या ही गलती की जा सकती है, सिवाय इसके कि उसकी वर्तनी अशुद्ध हो और उसके अनुरूप वाक्य-संरचना (लिंग, वचन आदि के गलत प्रयोग के कारण) न हो। संज्ञा के स्थानापन्न सर्वनाम हैं। संज्ञा का काम कई बार सर्वनामों से लिया ही जाता है। अरुणाचली हिंदी में अक्सर इस तरह की गलतियां होती हैं। यहां या तो सर्वनाम का गलत प्रयोग होता है या फिर सर्वनाम के अनुरूप क्रिया या सहायक क्रिया का प्रयोग नहीं होता। यहां स्ववाचक सर्वनाम 'मैं' के स्थान पर 'हम' का प्रचलन अधिक है। 'हम' सामूहिकता का बोधक सर्वनाम है और 'मैं' वैयक्तिकता का बोधक है। भाषा पर सोच और संस्कार का भी बड़ा असर पड़ता है। जनजातीय समाजों की जीवन-शैली में ऐकान्तिकता के बजाय सामूहिकता का महत्त्व अधिक रहता है। यह भी यहां 'हम' के अधिक प्रयोग का कारण हो सकता है। यहां की हिंदी में विशेष बात यह है कि सर्वनाम बहुवचनी होने के बाद भी क्रियापद एकवचन का ही उसके साथ लगाया जाता है, जैसे- 'हम जाएगा', 'हम करने नहीं सकेगा'। इसी तरह परवाचक सर्वनाम के साथ होता है। सम्मानसूचक सर्वनाम 'आप' का प्रयोग अपने से बड़ों के लिए होता तो है, पर क्रियापद इस तरह का प्रयुक्त नहीं होता, जैसे- 'आप जाएगा कि नहीं', 'हम भी क्या करेगा और आप भी क्या करेगा', 'आप आ गया'। जहां एकवचनी सर्वनाम का प्रयोग होता है वहां बहुवाची क्रियापद का प्रयोग होता है, जैसे 'मैं करते थे' या 'मैं पढ़ते थे'। इसी तरह सर्वनाम के गलत प्रयोग के दो उदाहरण विद्यार्थियों की भाषा से देखें- 'उन्होंने (कबीर) मूर्ति-पूजा, तीर्थयात्रा, जाति-पांति के भेदभाव के सख़्त खिलाफ़ थे।' या 'जाति-पांति की तत्कालीन वज्र अर्गलाओं के बीच रहते हुए भी वे वर्णाश्रम व्यवस्था का खुलकर विरोध किया है।' इन दोनों वाक्यों में से पहले वाक्य में जहां 'वे' का प्रयोग होना चाहिए था वहां 'उन्होंने' तथा दूसरे वाक्य में जहां 'उन्होंने' का प्रयोग होना चाहिए था, वहां 'वे' का प्रयोग किया गया है।

क्रियापदों ही नहीं, सहायक क्रिया के प्रयोग में अधिकतर गलती होती है और इसका प्रमुख कारण लिंग, वचन ही नहीं, काल के भी भेद का अन्तर न कर पाना है। इसीलिए विद्यार्थी अक्सर समसामयिक कवियों के साथ भूतकालिक तथा कबीर आदि पुराने कवियों के साथ वर्तमानकालिक क्रिया या सहायक क्रिया का प्रयोग कर बैठते हैं। इसी तरह से पुल्लिंग के साथ स्त्रीलिंग तथा स्त्रीलिंग के साथ पुल्लिंग क्रिया जोड़ देने से कभी-कभी 'कबीर कहती है' हो जाता है और 'मीराबाई कहता है' लिख दिया जाता है।

दूसरी बड़ी बात है, कारक चिन्हों के सही-गलत प्रयोग की। अरुणाचली हिंदी में या तो कारक चिन्हों का प्रयोग होता ही नहीं है या फिर गलत होता है। कारक चिन्हों के बिना प्रयुक्त कुछ वाक्यों के नमूने देखें- 'खाने दिल नहीं है', 'जाने दिल नहीं है', 'हम बहुत दुख हो गया सर', 'हम बहुत दुख लग गया', 'आप लोग क्यों तकलीफ़ होना है, हम लोग क्यों तकलीफ़ पाना है', 'हम गलती टाइप कर दिया है', 'आप हमसे ऐसे क्यों बोला है', 'जिन लोग अकाउंट खुलना था उन लोग अकाउंट नहीं खुला है'... वगैरह-वगैरह। कारक चिन्हों का जहां प्रयोग होता भी है तो बहुधा वह गलत होता है, जैसे- 'करने नहीं सकता है' या 'करने नहीं सकेगा'। इस तरह का एक उदाहरण देखें- 'हम तो सर आगे पढ़ने नहीं सकेगा, पिताजी को बीमार हुआ है'। कहीं-कहीं अनावश्यक परसर्गों का भी प्रयोग होता है अर्थात् कारक चिह्नों का अपव्यय होता है, जैसे- 'तुम अन्दर में क्या बैठा है, बाहर में आओ न!' या 'आपका बाइक को खराब हुआ है सर' तो कहीं दोहरे परसर्गों का प्रचलन यहां देखने को मिलता है, जैसे- 'कबीर ने स्वयं को भक्त कहते थे'। कुल मिलाकर कहें तो यहां की हिंदी में कारक चिह्नों का अभाव एवं अपव्यय दोनों से सम्बन्धित समस्याएं देखने को मिलती हैं।

यहां की हिंदी में 'में' परसर्ग के अधिक प्रयोग को देखते हुए कह सकते हैं कि अरुणाचली हिंदी 'में' मयी है। अंदर में, बाहर में, यहां में, वहां में, घर में, बाहर में, नदी में, पहाड़ में, धरती में, आकाश में- सभी जगह यहां 'में' का ही साम्राज्य है। 'पर' बेचारा यहां के लिए पराया है। यदि कहीं है भी तो ऐसी जगह कि जहां उसकी जगह ही नहीं है, जैसे- 'कबीर ने मनुष्यता पर महत्त्व दिया है' या 'कबीर हिन्दू और मुसलमान दोनों पर कभी भेदभाव नहीं किया।'

यहां 'ना' की ताकत बहुत बड़ी है। यह असमिया प्रभाव है। इसके बिना कुछ लोगों के वाक्य की गाड़ी आगे नहीं बढ़ती। 'हम ना सर आलो चला गया था', 'हम ना ऐसे हो गया सर', 'आज धूप देगा ना कि सर', 'बड़ा मजा है ना', 'वह गाना बहुत मजा था ना' इत्यादि। यहां मजा शब्द सचमुच बड़े मजे में है। उसका भाषा में धड़ल्ले से प्रयोग होता है। 'यह' शब्द भी यहां की भाषा का बड़ा संबल है। 'यह हो गया सर। यह का वजह से ऐसा हो गया।' बिहार में प्रयुक्त होने वाले 'अथि' की तरह कभी-कभी तो 'यह' का बड़ा रोचक प्रयोग देखने को मिल जाता है, जैसे- 'यह की वजह से यह हो गया, इसलिये यह करना पड़ा है।' इसी तरह से 'ऐसे' का भी यहां की भाषा में खूब सहारा लिया जाता है- 'हम नाऽ ऐसे हो गया सर, हम कल

पासीघाट चला गया है।' अथवा 'ऐसे हो गया.. हम उस आदमी को बोला है, पर वो हमारा बात को नहीं माना है। फिर आलो जाके लौट के आया है।'

क्रियापदों में 'सकना' क्रिया यहां बहुत सामर्थ्यवान है। 'सकेगा?', 'सकेगा कि नहीं?', 'हम नहीं सकेगा।' 'हम तो करने नहीं सकता है!', 'यह आदमी लेकिन सकता है!' इत्यादि 'सकना' के ऐसे प्रयोग हैं कि उनके आगे कर्ता, क्रिया, कर्म सभी मौन रह जाते हैं और रोचक यह, कि मौन रहते हुए भी वांछित अर्थ की प्रतीति करा देते हैं। पासीघाट महाविद्यालय में रहते समय एक बार बाज़ार से पचास किलो का सीमेंट का बोरा मोटर साइकिल पर ही लादकर ला रहा था। पहाड़ी चढ़ाई का रास्ता, पेट्रोल की टंकी से लेकर सीट तक बोरे का ऐसा विस्तार कि ब्रेक तक पैर पहुंचने भी मुश्किल! फिर भी किसी तरह ला ही रहा था। एक राहगीर को बड़ा विस्मय हुआ और उसके मुंह से बेसाख़्ता निकल पड़ा- 'ओऽ सकेगा क्या!'

शब्दों की दृष्टि से देखें तो शब्द-मितव्ययिता तथा शब्दापव्यय के साथ सटीक शब्द के प्रयोग का अभाव भी यहां की हिंदी की विशेषताएं हैं। उदाहरण के लिए 'आप बहुत खतरा आदमी है' या 'वह बहुत खतरा है'। जाहिर है यहां वक्ता का अभिप्राय खतरा से नहीं, खतरनाक से है। इसी तरह से क्रियापदों का अपने तरीके से प्रयोग होता है- 'सिस्टम को हम ऐसे पसंद नहीं होता है'। 'आदमी लोग ऐसे ही बोलता रहता है।'

अरुणाचली बोलियों में लिंग-भेद नहीं है। इसीलिये हिंदी में भी प्रायः इस तरह का ध्यान नहीं रह पाता। यही कारण है कि यहां लड़का भी जाता है और लड़की भी जाता है। ट्रक भी आता है और बस भी आता है। जायेगा सर, पढ़ेगा सर, खायेगा सर जैसे कथनों का प्रयोग लड़का भी करता है और लड़की भी करती है। 'कुक्कुर साला! देगा हम तुमको एक!' यह मत समझिए कि यह वाक्य किसी लड़के का ही होगा, लड़की का भी हो सकता है। वचन की दृष्टि से देखें तो यहां एकवचन-बहुवचन का ध्यान नहीं रखा जाता; इसीलिये यहां सब बोलता ही है, बोलते या बोलती कोई नहीं हैं। 'हम बोला है', 'आप बोला है', 'प्रिंसिपल सर बोला है' आदि कुछ इसी तरह के वाक्यों के नमूने हैं।

'होगा' की चर्चा के बिना अरुणाचली हिंदी की बात अधूरी है। 'होगा' यहां कुछ अति प्रचलित शब्दों में से एक है। इसका प्रयोग मात्र स्थानीय लोग ही नहीं करते, बाहर के लोग, यहां तक कि हिंदीभाषी भी इससे समरस हो गये हैं। लोग मानते हैं कि यह असमिया शब्द 'होबो' का हिंदी रूपान्तरण है। यह नकारात्मक एवं सकारात्मक दोनों प्रकार के अर्थ-गुणों से सम्पन्न है। यानी 'होगा' का अर्थ स्वीकार भी हो सकता है तथा नकार भी। इसका पता भंगिमा से लगता है। पर, यदि सामने वाला अनाड़ी हुआ तो यह अंदाजा लगाना मुश्किल हो जाता है कि जबाब 'हां' में आया कि 'न' में। पासीघाट प्रवास काल में एक मैडम ने एक बार एक किस्सा सुनाया था कि एक बार किसी के यहां कुछ परिचित जन आये। उनको कहीं

जाना था, किसी से मिलने। जब वे जाने लगे तो उन्होंने कहा कि खाना बना रहे हैं, लौटकर खाते हुए जाना। ‘होगा मैडम’ उन्होंने कहा, और फिर तो वे मैडम ‘होगा’ का अर्थ ‘हां’ समझ, खाना बनाकर इंतजार ही करती रह गयीं। मेहमान लौटकर आये ही नहीं, उधर से ही चले गये, जैसा कि वे अपने ‘होगा’ से संकेत कर गये थे। कभी-कभी लोग ‘होगा’ के स्थान पर ‘हो जायेगा’ का भी प्रयोग करते हैं।

(**परिचय :** लेखक राजीव गांधी विश्वविद्यालय, ईटानगर, अरुणाचल प्रदेश के हिंदी विभाग में प्रोफ़ेसर पद पर कार्यरत हैं। ई-मेल: hksgpn@gmail.com)